काडंला बंदरगाह के न्यासी बोर्ड

बनाम

हरगोविंद जसराज और ए एल आर

(2013 की सिविल अपील संख्या 153)

9 जनवरी 2013

टी.एस. ठाकुर ज्ञान सुधा मिश्रा

पट्टाः-

पट्टे की सम्पत्ति-पट्टाधारक में स्वामित्व का निहित होना-

भूमि विशेष का पट्टा समाप्त हो गया और पंचनामा के अनुसार उस पर कब्जा कर लिया गया-घोषणा और निषेधाज्ञा के लिए पट्टेदार के अंतरिती द्वारा मुकदमा आयोजित-पट्टे की समाप्ति के साथ पट्टेदार में निहित संपत्ति का शीर्षक कानूनी तौर पर- ऐसा होने पर, खाली संपत्ति का कब्जा,स्वामित्व के अनुरूप होगा और पट्टेदार में निहित होगा- साइट पर तैयार किए गए पंचनामा में पट्टेदार से कब्जे के वास्तविक अधिग्रहण के तथ्य दर्ज किए गए, जिसके बाद कानूनी तौर पर कब्जा भी पट्टेदार निहित हो जाएगा, इसके अलावा प्रश्नगत भूखण्ड से पट्टेदार की बेदखली को साबित करने के लिए अपीलकर्ता-ट्रस्ट के वरिष्ठ संपदा प्रबंधक को

संबोधित उसके संचार में निहित उसकी स्वंय की स्वीकारोक्ति से बेहतर कोई सबूत नहीं हो सकता, जिसकी वास्तविकता विवादित नहीं थी- इसलिए, यह माना जाता है कि पट्टेदार की बेदखली हुई थी पंचनामे के अनुसार पट्टा समाप्ति के क्रम में हुआ।

परिसीमा अधिनियम, 1963

घोषणा के लिए मुकदमा-परिसीमा यह माना गया कि- अधिनियम अनुसूची के अनुच्छेद 57 द्वारा कवर नहीं की गई घोषण के लिए एक मुकदमा उस तारीख से 3 साल के भीतर दायर किया जाना चाहिए जब पहली बाद मुकदमा करने का अधिकार उत्पन्न होता है- पट्टे की समाप्ति की घोषणा के लिए मुकदमा अमान्य था और इसलिए, पट्टेदार द्वारा अधिकार पहली बार अर्जित होने पर अप्रभावी स्थापित किया जा सकता था और उस उद्देश्य के लिए पट्टेदार की बेदखली नहीं मुकदमा करने के लिए पहले उत्पन्न होता है-घोषणा के लिए एक मुकदमा कि समाप्ति पट्टा अमान्य था और इसलिए पट्टेदार द्वारा अप्रभावी स्थापित किया जा सकता था जब अधिकार पहली बार अर्जित किया गया था और उस उद्देश्य के लिए, पट्टेदार को बेदखल नहीं किया गया था किया जाना आवश्यक है क्योंकि बेदखली पट्टे की सामप्ति से अलग है, हालांकि, बेदखली हो चुकी है, पट्टेदार को बेदखली की तारीख के तीन साल के भीतर मुकदमा दायर करना चाहिए था, लगभग अठारह वर्षों के बाद मुकदमा दायर किया जाना

स्पष्ट रूप से सीमा से वर्जित था-नीचे के न्यायालयों में समय के भीतर मुकदमा कायम करने में त्रुटि।

1891.64 वर्गमीटर की विषय- भूमि प्रतिवादी संख्या 2 को अपीलकर्ता पोर्ट ट्रस्ट द्वारा पट्टे पर दी गई थी। चूंकि पट्टेदार ने बकाया राशि और ब्याज के भुगतान में चूक की थी, इसलिए पट्टा, दिनांक 08.08.1977, दिनांक 13.12.1978 से प्रभावी आदेश द्वारा समाप्त कर दिया गया था। दिनांक 14/12/1978 के पंचनामे के तहत विषय-भूमि पर कब्जा ले लिया गया था, जिसकी एक प्रति पट्टेदार को दिनांक 20.12.1978 को इस प्रमाण पत्र के साथ भेजी गई थी कि कब्जा ले लिया गया है। प्रतिवादी नं 1 ने अपीलकर्ता पोर्ट -ट्रस्ट द्वारा पट्टे की समाप्ति पर सवाल उठाते हुए एक घोषणा और स्थायी निषेधाज्ञा के लिए 1996 का सूट नं 77, 77 दायर किया। वादी-प्रतिवादी सं 1 ने दावा किया कि उसने वाद की जमीन प्रतिवादी सं 2 से खरीदी थी वर्ष 1999 में और उस आधार पर प्रतिवादी संख्या 1 ने पोर्ट-ट्रस्ट से पट्टा अधिकार उसके पक्ष में स्थानांतरित करने के लिए कहा था। ट्रायल कोर्ट ने मुकदमे का फैसला सुनाया। प्रथम अपीलीय अदालत ने माना कि पट्टा वैद्य रूप से समाप्त नहंी किया गया था और यह जारी रहेगा। हालांकि इसने ट्रायल कोर्ट के फैसले के उस हिस्से को रद्द किया जिसके तहत उसने वादी-प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में पट्टा अधिकार हस्तान्तरित करने का निर्देश दिया था। पोर्ट-ट्रस्ट की दूसरी अपील खारिज होने के बाद उसने तत्काल अपील दायर की।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि-

1.1. यह स्पष्ट है कि पट्टेदार के पास संपत्ति के कब्जे को जारी रखने के संबंध में कोई स्पष्ट तथ्य नहीं है, भले ही पट्टा समाप्त हो गया हो और कब्जे के साक्ष्य के रूप में पंचनामा तैयार किया गया हो जिसमें कब्जे करने के सबंध में बात की थी और यहां तक कि उसे सूचित किया। यह प्रश्न कि क्या मुकदमे के प्लॉट का कब्जा ले लिया गया था, ने पहली अपीलीय अदालत या उच्च न्यायालय का ध्यान आकर्षित नहीं किया, हालांकि उच्च न्यायालय इस आधार पर आगे बढी कि नीचे की अदालातों द्वारा दर्ज किए गए तथ्य समवर्ती थे, बिना यह अंकित किए हुए कि क्या वह निष्कर्ष थे और पट्टेदार से कब्जा लेने के मुद्दे को किसी भी चुनौति से परे कैसे रखा।

1.2 यह कहने के लिए पर्याप्त है कि प्रतिवादी यह आग्रह करने में सही नहीं है कि पट्टे की समाप्ति के परिणामस्वरूप पट्टेदार की बेदखली एक तथ्य के रूप में साबित नहीं हुई थी। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि पट्टे की समाप्ति के साथ, कानूनी तौर पर, पट्टेदार के पास वाद संपत्ति का स्वामित्व निहित हो जाता है। ऐसा होने पर खाली संपत्ति का कब्जा शीर्षक के अनुसार होगा और पट्टेदार में भी निहित होगा। फिर भी, स्थल पर बनाए गए पंचनामे में पट्टेदार ने कब्जे के वास्तविक अधिग्रहण के तथ्य दर्ज किए गए, जिसके बाद जंगली झाडियों और घास के बाद बावजूद कब्जा भी कानूनी रूप से पट्टेदार में निहित हो गया। इस संबंध में कोर्ट

का यह विचार है कि पट्टेदार को सबंधित भूखण्ड से बेदखल कर दिया गया, को साबित करने के लिए वरिष्ठ संपदा प्रबंधक को संबोधित उसके पत्र दिनांक 22/02/1979 में निहित उसकी स्पष्ट और बिना शर्त स्वीकारोक्ति से बेहतर कोई सबूत नहीं हो सकता। उक्त दस्तावेज की वास्तविकता पर उत्तदाताओं द्वारा कोई विवाद नहीं किया गया। इसलिए, यह न्यायालय मानता है कि पट्टेदार की बेदखली दिनांक 14/12/1978 के पंचनामा के अनुसार पट्टा विलेख की समाप्ति के अनुसार हुई थी।

2.1 परिसीमा अधिनियम,1963 की अनुसूची के अनुच्छेद 57 द्वारा कवर नहीं की गई घोषणा के लिए मुकदमा उस तारीख से 3 साल के भीतर दायर किया जाना चाहिए, जब मुकदमा करने का अधिकार पहले जागृत होता है।

तत्काल मामले में मुकदमा करने का अधिकार पहली बार पट्टेदार को 13.12.1978 को मिला जब दिनांक 08.08.1977 के आदेश अनुसार पट्टेदार के पक्ष में पट्टा समाप्त कर दिया गया था। घोषणा करने के लिए मुकदमा कि पट्टे की समाप्ति अमान्य थी इसलिए किसी भी कारण से अप्राभावी थी, कारण यह है कि जिस व्यक्ति के आदेश पर इसे समाप्त किया गया था, उसके पास ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं था, इसे पट्टेदार द्वारा 14.12.1978 को स्थापित किया जा सकता था। ऐसे किसी भी मुकदमे के लिए यह आवश्यक नहीं था कि पट्टेदार ही हो पट्टे पर दी गई संपत्ति

से बेदखल करना, क्योंकि बेदखली पट्टे की समाप्ति से अलग भी। हालाँकि, इस तरह बेदखली 14.12.1978 को हुई थी, पट्टेदार को 15.12.1978 के तीन साल के भीतर मुकदमा दायर करना चाहिए था ताकि अनुच्छेद 58 के तहत निर्धारित समय के भीतर हो। मुकदमा, हालांकि तत्काल मामले में 1996 में दायर हुआ, यानी लगभग 18 वर्षों के बाद हुई थी, और इसलिए, स्पष्ट रूप से परिसीमा से वर्जित था। निचली अदालतों ने यह मानने में गलती की कि मुकदमा समय के भीतर था, और उस पर पूर्ण या आंशिक रूप से फैसला सुनाया। (पैरा 17 और 21) (603- वी.सी. 605 -जी.एच. 443 संदर्भित

पंजाब राज्य और अन्य। वी. गुरदेव सिंह 1991 (3) एस. सी. आर. 663 = (1991) 4 एस. सी. सी. 1 (दया सिंह और अन्य) वी. गुरूदेव सिंह (मृत) एल. आर. द्वारा - ओआरएस। 2010 (1) एससीआर 194 = (2010) 2 एस. सी. सी. 194; खत्री होटल्स प्रा. लिमिटेड और ए. एन. आर. बनाम भारत संघ और एन. आर. 2011 (15) एससीआर 299 = 2011 (9) एससीसी 126; कृष्णादेवी मालचंद कामठिया और अन्य। वी. बॉम्बे एनवायरनमेंट एक्शन समूह और ओआरएस। 2011 (3) एससीआर 291 = (2011) 3 एससीसी 363; और पुणे नगर निगम बनाम। महाराष्ट्र राज्य और अन्य।

2007 (3) एस. सी. आर. 277 = (2007) 5 एस. सी. सी. 211; आर. तिरुविरकोलम बनाम। पीठासीन अधिकारी और एएनआर। 1996 (8) पूरक। एससीआर 687 = (1997) 1 एस. सी. सी. 9; केरल राज्य बनाम। एम. के. कुन्हीकन्नन नाम्बियार मंजेरी मनिकोथ, नडूविल (मृत) और ओआरएस। 1995 (6) पूरक। एस. सी. आर. 139 = (1996) 1 एस. सी. सी. 435; और तैयबभाई एम. बागसरवाला और अन्न। वी. हिंद रबर इंडस्ट्रीज प्रा. लि. लिमिटेड आदि। 1997 (2) एससीआर 152 (1997) 3 एससीसी 443 बीएम संदर्भित। बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज ऑफ पोर्ट ऑफ कांडला अ. 593 हर्डोविंद जसराज और ए. एन. आर. स्मिथ बनाम पूर्वी एलो ग्रामीण जिला परिषद (1956) 1 सभी ई. आर. 855- संदर्भित किया गया।

2.2. निचली अदालतों द्वारा पारित किए गये आक्षेपित निर्णयों और डिक्री को रद्द कर दिया जाता है और उत्तदाताओं द्वारा दायर मुकदमा खारिज कर दिया जाता है।

मामला कानून संदर्भः

1991 (3) एससीआर 663 संदर्भित किया गया है

पैरा 18

2010 (1) एससीआर 194 संदर्भित किया गया है

पैरा 19

2011 (15) एससीआर 299 संदर्भित किया गया है

पैरा 19

1956 1 सभी ईआर 855 संदर्भित किया गया है पैरा 22

2011 (3) एससीआर 291 संदर्भित किया गया है

पैरा 23

2007 (3) एससीआर 277 संदर्भित किया गया है

पैरा 24

1996 (8) पूरक। एससीआर 687 संदर्भित किया गया है

पैरा 25

1995 (6) पूरक। एससीआर 139 संदर्भित किया गया है

पैरा 25

1997 (2) एससीआर 152 संदर्भित किया गया है

पैरा 25

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार:- सिविल अपील संख्या. 153/2013

गुजरात उच्च न्यायालय के 2007 के सिविल आवेदन संख्या 1791 के साथ एफ 2007 की दूसरी अपील संख्या 17 में निर्णय और आदेश दिनांकित 26.12.2007 से।

प्रवीण एच. पारेख, नितिन ठकराल, रजत नायर, रितिका सेठी, विशाल प्रसाद (पारेख एंड कंपनी) अपीलार्थी के लिए।

हुज़ेफा अहमदी, एजाज़ मकबूल, मृगांक प्रभाकर, अनस तनवीर, ऐश्वर्या भाटी, डॉ. प्रिखश्यत सिंह, संजोली मित्तल, कर्मेंद्र सिंह उत्तरदाताओं के लिए।

न्यायालय का निर्णय 2013, टी एस ठाकुर जे. द्वारा दिया गया था।

1. अनुमति स्वीकृत।

2. यह अपील अहमदाबाद में गुजरात उच्च न्यायालय द्वारा पारित 26 दिसंबर 2007 के एक निर्णय और आदेश से उत्पन्न हुई है जिसके तहत अपीलकर्ता द्वारा दायर 2007 की सिविल द्वितीय अपील संख्या को खारिज कर दिया गया है और न्यायालयों द्वारा निर्णय और डिक्री पारित की गई है जिसकी पुष्टि नीचे की है। इस अपील को दाखिल करने का आधार देने वाले तथ्यों को संक्षेप में निम्नानुसार प्रस्तुत किया जा सकता हैः-

3. गुजरात राज्य में सेक्टर 30, गांधी धाम में स्थित 1891.64 वर्गमीटर का एक भूमि का टुकडा श्रीमती पुष्पा प्रमोद शाह-प्रतिवादी संख्या 2 के पक्ष में लंबे अवधि के पट्टे के आधार पर दिया गया था। पट्टेदार के पक्ष में एक औपचारिक पट्टा-विलेख भी निष्पादित और पंजीकृत किया गया था, जिसमें उन नियमों और शर्तों को निर्धारित किया गया था, जिन पर पट्टेदार को अपने पक्ष में दी गई भूमि को रखना था। ऐसा प्रतीत होता है

कि प्रतिवादी-पट्टेदार ने पट्टा विलेख में निर्धारित पट्टा किराया के भुगतान में चूक की है, जिसके परिणाम स्वरूप अपीलकर्ता पट्टेदार ने 12 दिसंबर 1975 और 17 जुलाई 1976 को नोटिस जारी कर पट्टेदार को बकाया राशि ब्याज सहित भुगतान करने के लिए कहा तथा प्रश्नगत भूखण्ड का पट्टा खण्ड 4 के तहत निर्धारित किया जाएगा और आवश्यक कार्यवाही नहीं होने की स्थिति में अपीलकर्ता-पोर्ट-ट्रस्ट द्वारा स्वामित्व वाले परिसर कब्जा ले लिया जाएगा।

4. उपरोक्त नोटिस के जबाव में पट्टेदार ने 18 नवंबर 1976 को संचार द्वारा अपीलकर्ता पोर्ट-ट्रस्ट से अनुरोध किया कि वह उसे प्रतीकात्मक विचार के लिए भूखण्डों को फिर से बेचने और पोर्ट ट्रस्ट को पहले से भुगतान की गई किश्त राशि की वापसी प्राप्त करने को अनुमति दे। पत्र में उनके पति की आकस्मिक निधन के आधार पर बकाया भुगतान में चूक को उचित ठहराने की मांग की गई, जिसके परिणाम स्वरूप पट्टेदार द्वारा भूमि के किसी भी अन्य अधिग्रहण सहित विस्तार कार्यक्रम को रद्द कर दिया गया।

5. पट्टेदार द्वारा बकाया किस्त की राशि जमा करने में विफलता के परिणाम स्वरूप 08 अगस्त, 1977 के एक आदेश के अनुसार अपीलकर्ता द्वारा पट्टे की समाप्ति की गई।

6. 14 दिसंबर, 1978 को तैयार किए गए एक पंचनामे में अपीलकर्ता पोर्ट-ट्रस्ट द्वारा प्रश्नतगत भूखण्ड पर कब्जा करने का सबूत दिया गया था, जिसकी प्रतिलिपी पट्टेदार को भी एक प्रमाण पत्र के साथ भेज दी गई थी कि कब्जा सहायक संपदा प्रबंधक द्वारा अपने पत्र दिनांक 20/12/1978 के तहत ले लिया गया था।

7. उपरोक्त पत्र प्राप्त होने पर पट्टेदार ने 22 फरवरी, 1979 को अपने पत्र द्वारा अपीलकर्ता- पोर्ट ट्रस्ट से राशि वापस करने का अनुरोध किया और यदि धन वापसी नहीं की जा सकी, तो भूखंड का कब्जा उसे वापस कर दिया जाए। उक्त पत्र के जारी होने के एक साल और चार महीने बाद पट्टेदार-प्रतिवादी नंबर 2 ने सिविल जज, गांधीधाम की अदालत में 1980 का सिविल सूट नं 152 दायर किये, जिसमें उसने प्रतिवादियों को रोकने के लिए स्थाई निषेधाज्ञा की डिक्री की प्रार्थना की जिससे इसके अधिकारियों और नौकरों को विचाराधीन भूखण्ड पर उसके शांतिपूर्ण कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोका जाए। उक्त मुकदमा दायर करने के लिए तत्काल उत्तेजना अपीलकर्ता-पोर्ट ट्रस्ट द्वारा विचाराधीन भूखण्ड को फिर से नीलाम करने का प्रस्ताव प्रदान किया गया था। मुकदमे में वादी का मामला यह था कि उसके पास भूखण्ड का वास्तविक भौतिक कब्जा था, जिसने उसकी प्रस्तावित ई-नीलमी को अनुचित बना दिया। उक्त मुकदमें मंे एक अन्तरिम आवेदन भी दायर किया गया था जिसमें न्यायालय ने निषेधाज्ञा का एकपक्षीय आदेश दिया था जिसे बाद में 05 सिंतबर 1980 को पारित

कर एक विस्तृत आदेश यह कहते हुए रद्द कर दिया गया था कि वादी निषेधाज्ञा से राहत का हकदार नहीं था। यह सामान्य आधार है कि 1980 का मुकदमा संख्या 152 अन्ततः गैर-अभियोजन के कारण 18 जनवरी, 1985 को खारिज कर दिया गया था।

8. पहला मुकदमा खारिज होने के लगभग 6 साल बाद, एक और मुकदमा नं 126 इस बार प्रतिवादी नम्बर 1 हरगोविंद जसराज द्वारा प्रतिवादी नं 2 श्रीमती पुष्पा प्रमोद शाह के खिलाफ, उसके एजेंटों नौकरों और प्रतिनिधियों को विवाद में भूखण्ड पर वादी के कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोकने के लिए एक स्थाई निषेधात्मक निषेधाज्ञा के लिए याचिका दायर की। उक्त मुकदमे में दिए गए कथनों के अनुसार पट्टेदार कोई व्यवसाय या गतिविधि गांधीधाम में नहीं थी न ही वह सबंधित भूखण्ड का उपयोग कर रही थी और उसे अपने पति की मृत्यु के बाद भूखंड की देखभाल और प्रशासन करना मुश्किल हो रहा था। इसलिए, उसने इस अपील में पंजीकृत दस्तावेज के संदर्भ में वादी-प्रतिवादी नं 1 को भूखण्ड बेच दिया था। आगे यह आरोप लगया गया कि मुकदमा दायर करने का कारण, मुकदमा दायर करने से कुछ दिन पहले उपर्जित हुआ जब प्रतिवादी-पट्टेदार ने अपने प्रतिनिधि के माध्यम से वादी से मुकदमा प्लॉट खाली करने के लिए कहा, जो मांग, पार्टियों के बीच बिक्री समझौते का उल्लंघन थी। प्रश्नाधीन भूंखड से बेदखली की आशंका जताते हुए प्रतिवादी नं 1 ने प्रतिवादी नं 2 के खिलाफ निषेधाज्ञा की मांग की। यह उल्लेखनीय है कि अपीलकर्ता-पोर्ट

ट्रस्ट को मुकदमें में एक पक्ष के रूप में शामिल नहीं किया गया था, जिसे 15 मार्च 2002 को गैर-अभियोजन पक्ष के कारण खारिज कर दिया गया था।

9. पांच साल बाद ऊपर उल्लेखित दूसरे सूट के निपटान के लंबित होने पर, एक तीसरा मुकदमा 1996 का सूट नं 77 था, जो इस बार प्रतिवादी नं 1 द्वारा दायर किया गया था। जिसमें एक घोषणा और स्थायी निषेधाज्ञा की मांग की गई थी, जिसमें वादी ने पहली बार अपीलकर्ता-पोर्ट-ट्रस्ट द्वारा पट्टे की समाप्ति पर सवाल उठाया गया। एक घोषणा के तहत कि उक्त पट्टा अभी भी विद्यमान था, इस अपील में प्रतिवादी-अपीलकर्ता को रोकने वाला निषेघाज्ञा और उसके कर्मचारियों को विवादित भूमि पर स्वामित्व और वादी के कब्जे के लिए किसी भी तरीके से हानिकारक कार्य करने से रोकने के लिए प्रार्थना की गई थी। इस मुकदमें में वादी का मामला यह था कि उसने प्रश्नगत भूमि को श्रीमती पुष्पा प्रमोद शाह से वर्ष 1991 में गांधीधाम में स्थित उप-रजिस्ट्रार के यहाँ पंजीकृत एक हस्तांतरण विलेख के माध्यम से खरीदा था और उसने हस्तांतरण विलेख के संदर्भ कहा था कि उन्होंने उक्त हस्तातरण के आधार पर पट्टा अधिकारों के हस्तांतरण के लिए कहा था, जिसे अपीलकर्ता-पोर्ट ट्रस्ट द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था, 1994 वर्ष में। यह भी आरोप लगाया गया था कि उन्हें श्रीमती पुष्पा प्रमोद शाह के पक्ष में पट्टे के कथित रद्यिकरण के बारे में पता चला था और उनसे भूखण्ड का कथित कब्जा का लिया जाना उनके

अनुसार कानून की नजर में धोखाधड़ी और अमान्य दोनों था 18 साल बीत जाने के बाद इस मुकदमें को अपीलार्थी-पोर्ट ट्रस्ट ने कई आधारों पर चुनौति दी, जिन में से ट्रायल कोर्ट ने निर्धारण हेतु सात मुद्दे तैयार किए। अंततः उक्त न्यायालय द्वारा मुकदमे का फैसला सुनाया गया, जिससे व्यथित होकर अपीलकर्ता-पोर्ट ट्रस्ट ने प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष अपील दायर की, जिसने 16/11/2006 के अपने निर्णय और आदेश द्वारा उक्त अपील को आंशिक रूप से अनुमति दी। अपीलीय कोर्ट द्वारा पारित डिक्री की वहां तक पुष्टि की जहां तक ट्रायल कोर्ट द्वारा यह घोषणा की थी कि विचाराधीन लीज डीड को पट्टादाता द्वारा वैध रूप से समाप्त नहीं किया गया था और वही जारी रहेगा, लेकिन उक्त फैसले को अलग करते हुए बचे हुए फैसले के हिस्से के संबंध में अपील की अनुमति दी गई जहाँ ट्रायल कोर्ट द्वारा अपीलकर्ता पोर्ट ट्रस्ट को इस अपील में वादी-प्रतिवादी नं 1 के पक्ष में पट्टा अधिकार हस्तांतरित करने का निर्देश दिया गया।

10. अपीलकर्ता-पोर्ट ट्रस्ट ने उपरोक्त निर्णय और डिक्री के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील की जिसे उच्च न्यायालय ने हमारे समक्ष लागू आदेश के संदर्भ में यह कहते हुए खरिज कर दिया कि समवर्ति, समवर्ती निष्कर्षों और नीचे दिए गए न्यायालयों द्वारा दर्ज किए गए तथ्यों के प्रकाश में कानून का कोई महत्वपूर्ण प्रश्न नहीं उठता। उच्च न्यायालय ने पाया कि चूंकि पहले के मुकदमों का निर्णय योग्यता के आधार पर नहीं किया गया था, इसलिए उनमें कोई अंतिम निर्णय नहीं लिया गया था ताकि तीसरे

मुदमें में उठाए गए मुद्दों पर पुनर्न्याय के सिद्धांत को आकर्षित किया जा सके, जिसमें से वर्तमान कार्यवाही उत्पन्न हुई है।

11. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री प्रवीण एच. पारेख ने तर्क दिया है कि निचली अदालतों ने यह मानने में गंभीर गलती की है कि अपीलकर्ता- पोर्ट ट्रस्ट द्वारा पट्टे की समाप्ति अवैध थी या पट्टा जारी रहा। श्री पारेख ने तर्क दिया कि यह सवाल कि क्या वरिष्ठ संपदा प्रबंधक पट्टे को समाप्त करने और मुकदमें की संपति पर कब्जा करने में सक्षम था, नीचे की अदालतों द्वारा एक मुद्दे के रूप में शामिल नहीं किया गया था और समाप्ति को अनाधिकृत या अवैध मानने का आधार नहीं बनाया जा सकता था। वैकल्पिक रूप से, उन्होंने प्रस्तुत किया कि समाप्ति आदेश वर्ष 1977 में ही पारित कर दिया गया था जबकि विचाराधीन मुकदमा वर्ष 1996 में दायर किया गया था।

12. प्लॉट पर कब्जा 14 दिसंबर, 1978 को ही कर लिया था। इस तथ्य को पट्टेदार ने अपने पत्र दिनांक 22 फरवरी, 1979 में स्पष्ट रूप से स्वीकार किया था। ऐसा होने पर, कोई भी मुकदमा जिसका उद्देश्य समाप्ति की वैधता को चुनौती देना या उसके प्रक्रिया की वैधता पर हमला करना है, जिसके द्वारा पट्टेदार से कब्जा लिया गया था, जिसे मेजर पोर्ट ट्रस्ट अधिनियम की धारा 120 के अनुसार पट्टेदार को कार्यवाही का कारण मिलने की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर मामला दर्ज किया

जाना चाहिए। किसी भी दर पर, इस तरह का मुकदमा पट्टेदार को कार्यवाही का कारण मिलने की तारीख से अधिकतम तीन साल के भीतर दायर किया जा सकता है। न तो पट्टेदार और न ही अंतरिती, जो समाप्ति आदेश पारित होने और कब्जा लेने के काफी समय बाद घटनास्थल पर आया था, वह पट्टे की समाप्ति की वैधता पर सवाल उठा सकता है या पट्टेदार द्वारा 22 फरवरी, 1979 के अपने पत्र में की गई स्पष्ट और स्पष्ट स्वीकारोक्ति के आलोक में अपने कब्जे की सुरक्षा की मांग कर सकता है, जिस विचाराधीन भूखण्ड का कब्जा उससे छीन लिया गया है। इस दृष्टि से निचली अदालतों ने यह मानकर गलती की है कि मुकदमा समय के भीतर था।

13. दूसरी ओर, प्रतिवादी की ओर से उपस्थित वकील श्री अहमदी ने प्रस्तुत किया कि नीचे की अदालतों ने इस तथ्य का एक समवर्ती निष्कर्ष दर्ज किया था कि पट्टेदार ने पट्टे की समाप्ति के बाद भी मुकदमें की संपत्ति पर कब्जा जारी रखा है। जिस पर हमला नहीं किया जा सकता है न ही वादी अंतरिती या मूल पट्टेदार के लिए कोई कानूनी बाधा थी, जो अपने कब्जे की सुरक्षा के लिए वर्ष 1999 में वादी के रूप में शामिल हुआ था। श्री अहमदी द्वारा यह भी तर्क दिया गया कि 22 फरवरी, 1979 को अपने पत्र में पट्टेदार द्वारा की गई स्वीकारोक्ति स्पष्ट नहीं थी और उसके पति की मृत्यु और उसके परिणामस्वरूप पट्टेदार की विस्तार कार्यक्रम या

पट्टे की शेष राशि का भुगतान करने में असमर्थता सहित परिचर परिस्थितियों द्वारा समझाया गया।

ट्रायल कोर्ट ने विवादित भूखंड से पट्टेदार को बेदखल करने के सवाल पर विचार करते हुए बल्कि स्पष्ट खोज दर्ज किया है।

> "यह इसके द्वारा की गई निम्नलिखित निर्णय की टिप्पणियों से स्पष्ट हैः- 49 के साथ प्रस्तुत आगे के पंचनामें को भूखंड का भौतिक कब्जा लेने का पंचनामा नहीं कहा जा सकता क्योंकि भूखण्ड खुला है। वर्तमान में भी यह खुला है और वहां बबूल के पेडों की झाड़ियां है और ऐसे में पुष्पाबेन या. के. पी. टी के कब्जे के बारे में कुछ भी कहना मुश्किल है। यह विश्वास नहीं किया जा सकता कि केवल पंचनामा तैयार करने से उस व्यक्ति से कब्जा ले लिया गया है जिसके पास भूखण्ड है। के. पी. टी. ने 49 के अनुसार कब्जा नहीं लिया है, पुष्पाबेन की उपस्थिति में उक्त परिस्थितियों में प्लॉट खुला है... "

14. यह स्पष्ट है कि पट्टेदार के पास मुकदमें की संपत्ति के कब्जे के जारी रहने के संबंध में कोई स्पष्ट तथ्य नहीं है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि पट्टा समाप्त हो गया है और कब्जे के अधिग्रहण का सबूत देने वाला एक पंचनामा तैयार किया गया है और यहां तक कि उसे सूचित भी किया

गया है। उपरोक्त निर्णय और डिक्री के खिलाफ दायर अपील में प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी कोई विशिष्ट निष्कर्ष दर्ज नहीं किया गया कि क्या प्लॉट का कब्जा पोर्ट ट्रस्ट द्वारा नहीं लिया गया था, भले ही उसके द्वारा जिन दस्तावेजों पर भरोसा किया गया था वह इस तरह के अधिग्रहण का सबूत हो। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने इसके बजाय माना की पट्टे की समाप्ति वैध नहीं थी क्योंकि संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम 1882 की धारा 106 और 111(जी) के संदर्भ में समाप्ति के संबंध में कोई नोटिस साबित नहीं हुआ था और न ही पट्टेदार को दिया था और न ही यह साबित हुआ कि जिस व्यक्ति ने नोटिस म्गण् 47 पर हस्ताक्षर किए थे और जिसने म्गण् 49 के साथ सलंग्न पंचनामें के संदर्भ में कब्जा लिया था, उसे ऐसा करने के लिए कांडला पोर्ट ट्रस्ट, पट्टादाता द्वारा अधिकृत किया गया था। प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्षों को उसके निर्णय के अनुच्छे 59 में निम्नलिखित शब्दों में संक्षेपित किया गया थाः

> "59. इस निर्णय के पूर्वगामी पैराग्राफों में जो कहा गया है, उसके मद्देनर यह न्यायालय निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुंचा हैः-
>
> 1. अपीलकर्ता/मूलप्रतिवादी, पट्टेदार यानी प्रतिवादी संख्या 2/मूल वादी संख्या 2 पर संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 111(जी) और 106 के तहत आवश्यक पट्टे को समाप्त

करने के नोटिस की सेवा को साबित करने में विफल रहा है।

2. प्रतिवादी/वर्तमान अपीलकर्ता यह साबित करने में विफल रहा है कि जिस व्यक्ति ने नोटिस पर हस्ताक्षर किए थे (47 और जिस व्यक्ति पर आरोप है कि उसने मुकदमें की साजिश में दोबारा प्रवेश किया और 49 पर हस्ताक्षर किए और 49 के साथ पंचनामा पेश किया जिसको विशेषरूप से कांडला पोर्ट ट्रस्ट यानी पट्टादाता और कांडला पोर्ट ट्रस्ट के अध्यक्ष द्वारा अधिकृत किया गया था।

3. पट्टा दिनांक 14/12/1966 कानूनी रूप से और वैध रूप से पट्टेदार द्वारा निर्धारित नहीं किया गया है, इसलिए यह आज तक अस्तित्व में है और जीवित है, और पट्टेदार श्रीमती पुष्पाबेन शाह यानी प्रतिवादी नं 2 मुकदमा प्लांट नं 30 सेक्टर नं 8 को रखने और आनंद लेने का हकदार है।"

15. अपीलकर्ता द्वारा दायर की गई दूसरी अपील में, उच्च न्यायालय का विचार था कि मामला पट्टे की समाप्ति की वैधता और उन लोगों के अधिकार के संबंध में तथ्यों के समवर्ती निष्कर्षों से समाप्त हुआ था, जिन्होंने ऐसे समाप्त करने का इरादा किया था। एक सवाल कि क्या मुकदमें के प्लॉट पर कब्जा कर लिया था, पहले अपीलीय न्यायालय या

उच्च न्यायालय ने ध्यान आकर्षित नहीं किया हालांकि उच्च न्यायालय ने इस आधार पर मुकदमें को आगे बढ़ाया कि नीचे दिए गए न्यायालयों द्वारा दर्ज किए गए तथ्य के निष्कर्ष समवर्ती थे, बिना बताए वे निष्कर्ष क्या थे और उसे कैसे उसी ने पट्टेदार से कब्जे लेने के मुद्दे को किसी भी चुनौति से परे रखा। यह कहना पर्याप्त है कि प्रतिवादी यह आग्रह करने में सही नहीं है कि पट्टे की समाप्ति के परिणामस्वरूप पट्टेदार की बेदखली एक तथ्य के रूप में साबित नहीं हुई थी। नीचे दी गई किसी भी अदालत ने इस पहलू पर स्पष्ट निष्कर्ष दर्ज नहीं किया है। भले ही ट्रायल कोर्ट ने अपने निर्णय में संक्षेप में उस मुद्ये को छुआ लेकिन मामले में सकारात्मक निष्कर्ष को रिकॉर्ड करने से इनकार कर दिया। इसके अलावा ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित आदेश से ऊपर निकाले गए अंश को ध्यान से पढ़ने से पता चलता है कि ट्रायल कोर्ट इस धारणा के तहत काम कर रहा था कि भूमि के खाली टुकड़े का कब्जा पट्टादाता द्वारा तब तक नहीं लिया जा सकता जब तक की कोई स्पष्ट कब्जे का कृत न हो। यह तथ्य कि भूखंड पर जंगली झाडियों उग रही थी हमारी राय में, यह मानने का कोई कारण नहीं था कि भूखंड के अधिग्रहण का सबूत देने वाले पोर्ट ट्रस्ट अधिकारियों द्वारा तैयार किया गया पंचनामा यह स्थापित करने के लिए अप्रसांगिक या अपर्याप्त था कि पट्टेदार की बेदखली की प्रक्रिया पूरा किया गया था। हमें यह याद रखने की जरूरत है कि पट्टे की समाप्ति के साथ, कानूनी तौर पर पट्टेदार के पास वाद संपत्ति का कब्जा शीर्षक के अनुसार होगा और

पट्टेदार में भी निहित होगा। फिर भी, साइट पर बनाए गए पंचनामे में पट्टेदार से कब्जे के वास्तविक अधिग्रहण के तथ्य को दर्ज किया गया, जिसके बाद जंगली झाड़ियों और घास की वृद्धि के बावजूद, कब्जा भी कानूनी रूप से पट्टेदार में निहित हो गया। हमें इस पहलू पर और गहराई से विचार करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि हमारा विचार है कि, यह साबित करने के लिए कि क्या पट्टेदार को प्रश्नगत भूखंड से बेदखल कर दिया गया था, उसके 22 फरवरी, 1979 के पत्र में दी गई स्वयं की स्वीकारोक्ति से बेहतर कोई सबूत नहीं हो सकता है। इस स्तर पर पत्र को विस्तार में निकाला जा सकता हैः-

> "प्रिय महोदय,
>
> मुझे आपका पत्र संख्या ई एस/एल एल/723/63/9180 दिनांक 20 दिसंबर, 1978 प्राप्त हुआ है जिसमें सूचित किया गया है कि सहायक संपदा प्रबंधक ने प्लॉट सख्या 30 सेक्टर 8 पर कब्जा कर लिया है। कृपया ध्यान दें, आपने मुझे 14/12/1978 को 4 बजे भूखंड़ स्थल पर उपस्थित होने के लिए सूचित नहीं किया है। और आपका पत्र संख्या ई एस/एल एल/723/63/6248 दिनांक 8 अगस्त, 1977 जो मुझे भेजा जाना बताया गया है, अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है इसलिए आपके पास भूखंड में पुनः प्रवेश करने का

अधिकार नहीं है। चूंकि आपने प्लॉट का कब्जा ले लिया है, अब आपसे अनुरोध है कि कृपया सभी राशियां तुरंत वापस कर दें, अन्यथा आप प्लॉट का कब्जा मुझे वापस लौटा सकते हैं। यदि मुझे इस पत्र की प्राप्ति की तारीख से सात दिनों के भीतर आपकी ओर से कोई जानकारी नहीं मिलती है तो आपके खिलाफ उचित कानूनी कार्यवाही अपनाई जाएगी, जिसमें इसके परिणामों की लागत के लिए पूरी तरह से आपको जिम्मेदार ठहराया जाएगा।

भवदीय

एस डी/ - पी पी शाह

(श्रीमती पुष्पा पी. शाह)"

16. उपरोक्त दस्तावेज की सत्यता के संबंध में उत्तरदाताओं के विद्वान वकील द्वारा विवाद नहीं किया गया। जिन सबको तर्क दिया था, वह यह था कि पट्टेदार की बेदखली के संबंध में स्वीकारोक्ति ऐसी परिस्थितियों में की गई थी कि (ए) एक प्रवेश नहीं माना जा सकता है और (बी) पट्टेदार, निर्मात को इसके बाध्यकारी प्रभाव से मुक्त कर दिया गया है। पट्टेदार के पति की मृत्यु हो जाने के कारण, विचाराधीन पत्र में और संकट की स्थिति में लिखा गया था और इसमें की गई कोई भी स्वीकारोक्ति यह नहीं कह सकती कि श्री अहमदी और सुश्री भाटी को सही अर्थों में स्वीकारोक्ति माना

जाएगा। हमें उस समर्पण को स्वीकार करने में अपनी असमर्थता पर खेद है। सवाल यह है कि क्या पट्टे की समाप्ति के बाद पट्टेदार से कब्जा वास्तव में ले लिया गया था। उस प्रश्न का उत्तर स्पष्ट रूप से पत्र द्वारा प्रदान किया गया है, जिसमें पट्टेदार स्पष्ट और बिना शर्त स्वीकार करता है कि कब्जा वास्वत में अपीलकर्ता-पोर्ट ट्रस्ट द्वारा ले लिया गया था। महत्वपूर्ण बात यह है कि पट्टेदार ने किस्तों के रूप में उसके द्वारा भुगतान की राशि वापस मांगी थी और यदि धन वापस करना संभव नहीं है तो उसे प्लॉट वापस करना चाहिए। हमें नहीं लगता कि पत्र में दी गई ऐसी स्पष्ट स्वीकारोक्ति को उस मुकदमें में खारिज किया जा सकता है या नजरअंदाज किया जा सकता है, जहां सवाल यह है कि क्या पट्टेदार को वास्वत में पट्टे की समाप्ति के बाद बेदखल कर दिया गया था। ऐसा कोई सार्थक स्पष्टीकरण या कोई अन्य कारण नहीं है जो संभवतः प्रवेश को वापस लेने का कारण बन सके या कोई स्पष्टीकरण जो न्यायालय के समक्ष दोषसिद्धि को आगे बढ़ाने के लिए पर्याप्त ठोस है।

17. हमें यह मानने में कोई झिझक नहीं है कि पट्टेदार की बेदखली 14 दिसंबर, 1978 के पंचनामें के अनुसार पट्टा विलेख की समाप्ति के अनुसार हुई थी। अगला सवाल यह है कि क्या घोषणा के लिए मुकदमा दायर किया जा सकता है कि पट्टे की समाप्ति अवैध थी और पट्टा जारी रहा, समाप्ति के 17 साल से अधिक समय बाद दायर किया जा सकता है। परिसीमा अधिनियम, 1963 की अनुसूची के अनुच्छेद के अनुच्छेद 57 के

अंतर्गत नहीं आने वाली घोषणा के लिए मुकदमा पहली बार मुकदमा करने का अधिकार उत्पन्न होने की तारीख से 3 साल के भीतर दायर किया जाना चाहिए। ऐसे मुकदमों पर लागू अनुच्छेद 58 इस प्रकार हैः-

	मुकदमे का वर्णन	सीमा की अवधि	जिस अवधि से समय चलना शुरू होता है।
58	कोई अन्य घोषणा प्राप्त करना	तीन साल	जब मुकदमा करने का अधिकार पहली बार अर्जित होता है।

18. मुकदमा करने के अधिकार की अभिव्यक्ति को परिभाषित नहीं किया गया है। लेकिन यह कई मौकों पर न्यायालयों के समक्ष व्याख्या के लिए पड़ा है। पंजाब राज्य और अन्य बनाम वी. गुरदेव सिंह (1991) 4 एससीसी 1. अभिव्यक्ति को इस प्रकार समझाया गया थाः-

> "शब्द "मुकदमा चलाने का अधिकार" सामान्यतः कानूनी कार्यवाही के माध्यम से राहत पाने का अधिकार है। आम तौर पर, मुकदमा करने का अधिकार तभी मिलता है जब कार्यवाही का कारण उत्पन्न होता है, यानी कानूनी तरीकों से राहत प्राप्त करने के लिए मुकदमा चलाने का अधिकार। मुकदमा तब संस्थित किया जाना चाहिए, जब मुकदमे में दिए गए अधिकार का उल्लंघन किया गया हो या जब प्रतिवादी, प्रतिवादी जिसके विरूद्ध मुकदमा संस्थित किया

गया है, द्वारा उस अधिकार का उल्लंघन करने की स्पष्ट धमकी दी गई हो।''

19. इसी तरह दप्या सिंह और ए.एल.आर बनाम गुरदेव सिंह (मृत) एलआरएस द्वारा एवं अन्य (2010) 2 एस सी सी 194 स्थिति को इस प्रकार पुनः बताया गयाः-

> "13. इसलिए आइए विचार करें कि क्या वादपत्र में बताए गए तथ्यों की पृष्ठभूमि में अधिनियम के अनुच्छेद 58 के मद्देनजर मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था। अनुसूची का भाग 111 जिसमें परिसीमा अवधि निर्धारित की गई है, घोषणाओं से संबंधित मुकदमे से है। अधिनियम के अनुच्छेद 58 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि किसी भी अन्य घोषणा को प्राप्त करने के लिए मुकदमा करने का अधिकार पहली बार अर्जित होने की तारीख से तीन वर्ष की सीमा होगी।
>
> 14. इस तर्क के समर्थन में कि मुकदमा परिसीमा की अवधि के भीतर दायर किया गया था, हमारे समक्ष अपीलकर्ता वादी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया कि मुकदमा करने का कोई अधिकार नहीं हो सकता जब तक की इसमें दावा किये गए अधिकार का संचय न हो, मुकदमा ओर उसका उल्लंघन या कम से कम

उस प्रतिवादी द्वारा उस अधिकार का उल्लंघन करने की स्पष्ट धमकी जिसके खिलाफ मुकदमा दायर किया गया है। इस विवाद के समर्थन में विद्वान वरिष्ठ वकील ने ए आई आर 1930 पी सी 270 बोलो बनाम कोकलान में रिपोर्ट किए गए प्रिवी कांउसिल के निर्णय पर दृढ़ता से भरोसा किया। इस निर्णय में प्रिवी कांउसिल के आधिपत्य ने इस प्रकार देखाः-

''मुकदमा करने का कोई अधिकार तब तक नहीं हो सकता जब तक कि मुकदमे में दावा किए गए अधिकार का संचय न हो ओर इसका उल्लंघन न हो, या कम से कम प्रतिवादी द्वारा, जिसके खिलाफ मुकदमा है, उस अधिकार का उल्लंघन करने की स्पष्ट और सुस्पष्ट धमकी स्थापित न की गई हो।''

15. मोहम्मद यूनूस बनाम सैयद उन्निसा एआईआर 1961 एस सी 808 में भी इसी तरह का दृष्टिकोण दोहराया गया था, जिसमें इस न्यायालय ने कहा थाः-

''अनुच्छेद 120 द्वारा निर्धारित छह साल की अवधि की गणना उस तारीख से की जानी चाहिए, जब मुकदमा करने का अधिकार अर्जित होता है और कोई मुकदमा करने का अधिकार नहीं हो सकता है जब तक मुकदमें में दावा किए

गए अधिकार का उपार्जन और उसका उल्लंघन न हो या कम से कम उस अधिकार का उल्लंघन करने की स्पष्ट धमकी न हो।'' सी मोहम्मद यूनूस मामले में, इस न्यायालय ने माना कि अधिनियम के अनुच्छेद 58 के प्रयोजनों के लिए कार्यवाही का कारण तभी बनता है जब मुकदमें में दिए गए अधिकार का उल्लंघन किया जाता है या उस अधिकार का उल्लंघन करने के लिए कम से कम एक स्पष्ट और स्पष्ट खतरा होता है। इसलिए, राजस्व रिकॉर्ड में प्रतिकूल प्रविष्टि का अस्तित्व ही कार्यवाही का कारण नहीं बन सकता।

''तदनुसार हमारा विचार है कि मुकदमा करने का अधिकार तब प्राप्त होता है जब प्रतिवादियों द्वारा उस अधिकार का उल्लंघन करने की स्पष्ट धमकी दी जाती है...''

20. खत्री होटल्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य के मामले में इस कोर्ट के फैसलों का संदर्भ लिया जा सकता है (2011) 9 एससीसी 126 जहां इस न्यायालय ने कहा:-

''1963 अधिनियम के अनुच्छेद 58 को अधिनियमित करते समय, विधायिका ने जान बूझकर 1908 अधिनियम के अनुच्छेद 120 की भाषा से विचलन किया है। ''मुकदमा''

और "उपाजित" शब्दों के बीच "प्रथम" शब्द का उपयोग किया गया है। इसका मतलब यह है कि यदि कोई मुकदमा कार्यवाही के कई कारणों पर आधारित है, तो परिसीमा की अवधि उस तारीख से शुरू होगी जब मुकदमा करने का अधिकार पहली बार अर्जित होता है। इसे अलग तरीके से कहें तो अधिकार का लगातार उल्लंघन नए कारण को जन्म नहीं देगा और मुकदमा खारिज कर दिया जाएगा यदि यह उस दिन से गणना की गई परिसीमा की अवधि से परे है, जब मुकदमा करने का अधिकार पहली बार अर्जित हुआ था।"

21. वर्तमान मामले में मुकदमा करने का अधिकार पहली बार पट्टेदार को 13 दिसंबर, 1978 को मिला जब आदेश दिनांक 8 अगस्त 1977 के अनुसार पट्टेदार के पक्ष में पट्टा समाप्त कर दिया गया था। पट्टे की समाप्ति की घोषणा का मुकदमा अमान्य था इसके अप्रभावी होने यह कारण भी शामिल था कि जिस व्यक्ति के आदेश पर उसे समाप्त किया गया था, उसके पास ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं था, पट्टेदार द्वारा स्थापित 14 दिसंबर 1978 को किया जा सकता था। ऐसे किसी भी मुकदमे के लिए यह आवश्यक नहीं था कि पट्टेदार को पट्टे की संपत्ति से बेदखल कर दिया गया था क्योंकि बेदखली पट्टे की समाप्ति से अलग थी। लेकिन यह मानते हुए भी कि मुकदमा करने का अधिकार उस तारीख तक पूरी

तरह से प्राप्त नहीं हुआ था जब पट्टेदार को प्रश्नगत भूखण्ड से बेदखल कर दिया गया था, ऐसी बेदखली 14 दिसंबर 1978 को हुई थी, पट्टेदार को 15 सितंबर 1978 से तीन साल के भीतर मुकदमा दायर करना चाहिए ताकि ऊपर दिए गए अनुच्छेद 58 के तहत निर्धारित समय के भीतर हो। हालांकि, मौजूदा मामले में मुकदमा वर्ष 1996 में यानी लगभग अठारह साल बाद शुरू किया गया था और इसलिए स्पष्ट रूप से सीमा से वर्जित था। निचली अदालतों ने यह मानने में गलती की कि मुकदमा समय के भीतर था और उस पर पूर्ण या आंशिक रूप से फैसला सुनाया गया।

22. श्री अहमदी ने आगे तर्क दिया कि पट्टे की समाप्ति अवैध और कानून में निहित नहीं होने के कारण, वादी-प्रतिवादी इसे अनदेखा कर सकते हैं, और जब तक वे या उनमें से कोई भी कब्जे में रहेगा निषेधाज्ञा को रोकने के लिए एक डिक्री पोर्ट ट्रस्ट को उनके कब्जे में हस्तक्षेप करने से ऐसा करने के लिए सक्षम न्यायालय द्वारा पारित किया जा सकता है। हम उस सबमिशन से प्रभावित नहीं है। पट्टा विलेख की समाप्ति एक आदेश द्वारा की गई, जिसे वादी को उसे रद्द करके छुटकारा पाना चाहिए या किसी भी कारण से अमान्य घोषित करना चाहिए, जैसा भी मुमकिन हो। ऐसे किसी भी आदेश से प्रभावित किसी भी व्यक्ति को ऐसा करने के लिए अनुमत अवधि के भीतर, उक्त के खिलाफ निवारण की मांग करनी चाहिए। इस संबंध में हम स्मिथ बनाम एलो रूरल डिस्ट्रिक्ट कांउसिल (1956)। ऑल ई आर 855 में अक्सर उद्धत निम्नलिखित अंश का उल्लेख कर

सकते हैं। किसी आदेश की अमान्यता प्राप्त करने के लिए न्यायालय का सहारा लेने की आवश्यकता के संबंध टिप्पणियां स्थापित हैः-

> ‘‘एक आदेश, भले ही अच्छे विश्वास में न दिया गया हो फिर भी उसके विधिक नतीजे होते हैं। इसके माथे पर अमान्यता का कोई चिन्ह नहीं है। जब तक अमान्यता कारण स्थापित करने और इसे रद्द करने या अन्यथा परेशान करने के लिए कानून में आवश्यक कार्यवाही नहीं की जाती है, तब तक यह अपने दिखावटी उद्येश्य के लिए सबसे त्रुटिहीन आदेशों के समान ही प्रभावी रहेगा।’’
>
> "यह वहां भी उतना ही सच, होना चाहिए जहां अमान्यता का ब्रांड स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, क्योंकि वहां भी अदालत का निर्णय प्राप्त करके ही आदेश का कानून में प्रभावी ढ़ंग से विरोध किया जा सकता है। पेटेंट ओर अव्यक्त दोषों के बीच भेद किए बिना हाउस ऑफ लॉर्डय और प्रिवि कांउसिल में बार-बार अदालत का सहारा लेने की आवश्यकता बताई गई है।"

23. उपरोक्त मामले को इस न्यायालय द्वारा कृष्णादेवी मालचंद कामथिया एवं अन्य बनाम बाम्बे पर्यावरण कार्यवाही समूह और अन्य

(2011) 3 (363) में अनुमोदित किया गया था, जहां इस न्यायालय ने कहाः

> "19. इस प्रकार, उपरोक्त से यह पता चलता है कि भले ही आदेश/अधिसूचना शून्य है/शून्य करने योग्य हो से पीडित पक्ष यह निर्णय नहीं ले सकता कि उक्त आदेश/अधिसूचना उस पर बाध्यकारी नहीं हैं। इसके लिए उसे अदालत का दरवाजा खटखटाना होगा ऐसी घोषणा की मांग करने के लिए। आदेश काल्पनिक रूप से अमान्य हो सकता है और भले ही किसी दिए गए इसकी अमान्यता को अदालत के समक्ष चुनौति दी गई हो, अदालत याचिकाकर्ता की स्थिति देरी के आधार सहित, विभिन्न आधारों, है। छूट के सिद्धांतया या किसी अन्य कानूनी कारण पर करने से इनकार कर सकती है। आदेश एक उद्येश्य या एक व्यक्ति के लिए अमान्य हो सकता है, किसी अन्य उद्येश्य या किसी अन्य व्यक्ति के लिए ऐसा नहीं हो सकता है।"

24. इसी आशय का पुणे नगर निगम बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य (2007) 5 एस सी सी 211 में इस न्यायालय का निर्णय है जहां इस

न्यायालय ने सार्वजनिक उद्येश्यों के लिए आदेश की अमान्यता के निर्धारण की आवश्यकता पर चर्चा की थीः-

“ 36. यह अच्छी तरह से तय है कि किसी भी आदेश को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है जब तक कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया जाता है कि यह अवैध था, शून्य या कानून के अनुरूप नहीं था जैसा कि प्रोफेसर वेड कहते हैं:

“सिद्धांत समान रूप से सच होना चाहिए, भले ही” अयोग्यता का ब्रांड स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा हैः क्योंकि वहाँ भी न्यायालय का निर्णय प्राप्त करके ही कानून में आदेश का प्रभावी ढंग से विरोध किया जा सकता है।”

वह आगे कहते हैं:-

“मामले की सच्चाई यह है कि अदालत किसी आदेश को तभी अमान्य करेगी जब सही व्यक्ति द्वारा सही उपाय की मांग की जाए सही कार्यवाही और परिस्थितियों में। यह आदेश काल्पनिक रूप से यह अमान्य हो सकता है, लेकिन न्यायालय इसे रद्द करने से इनकार कर सकता है। वादी की स्थिति की कमी के कारण क्योंकि वह एक विवेकाधीन उपचार के लायक नहीं है, क्योंकि उसने अपने अधिकारों को माफ कर दिया है, या किसी अन्य कानूनी कारण से। ऐसे

किसी भी मामले में श्शून्यश् आदेश बना रहता है और वास्तव में वैध है। यह आदेश इस प्रकार है कि यह एक उद्देश्य के लिए शून्य और दूसरे के लिए वैध हो सकता है, और कि यह एक व्यक्ति के खिलाफ शून्य हो सकता है लेकिन उसके खिलाफ वैध हो सकता है।''

38. एक ऐसा ही सवाल पहले भी पंजाब राज्य और अन्य बनाम गुरदेव सिंह (1992) आई. एल. एल. जे. 283 एस. सी. में इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आया था....

39. सभी न्यायालयों द्वारा पारित डिक्री को दरकिनार करते हुए और कई मामलों का उल्लेख करते हुए, इस न्यायालय ने कहा कि यदि पक्षकार यदि आदेश की अमान्यता से पीडित यह घोषित करने के लिए न्यायालय का दरवाजा खटखटाना चाहता है कि उसके खिलाफ आदेश निष्क्रिय था, तो उसे न्यायालय के समक्ष आना होगा वो भी परिसीमा द्वारा निर्धारित अवधि के भीतर।'' यदि परिसीमा का वैधानिक समय समाप्त हो जाता है, तो न्यायालय मांगी गई घोषणा नहीं दे सकता।"

25. हर्डोविंद जसराज और ए. एन. आर. ख् टी. एस. ठाकुर, जे., आर. तिरुविरकोलम बनाम पीठासीन अधिकारी और एएनआर। (1997) 1

एस. सी. सी. 9, केरल राज्य बनाम एम. के. कुन्हीकन्नन नाम्बियार मंजेरी मणिकोथ, नडूविल (मृत) और ओआरएस। (1996) 1 एससीसी 435 और तैयबभाई एम. बागसरवाला और अन्र। वी. हिंद रबर इंडस्ट्रीज प्रा. लिमिटेड आदि। (1997) 3 एस. सी. सी. 443, जहाँ इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया गया है कि एक आदेश प्रभावी रहेगा और कानूनी परिणामों की ओर ले जाएगा जब तक कि एक सक्षम न्यायालय द्वारा इसे अमान्य घोषित नहीं किया जाता है।

26. यह सच है कि उपरोक्त कुछ मामलों में, यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उत्पन्न होने वाली कार्यवाही पर विचार कर रहा था संविधान, शक्तियों का प्रयोग जिसके तहत विवेकाधीन है लेकिन फिर विशिष्ट राहत अधिनियम के तहत घोषणात्मक राहत का अनुदान प्रकृति में भी विवेकाधीन है। एक दीवानी न्यायालय उचित मामले अच्छे के लिए एक घोषणात्मक डिक्री को अस्वीकार करते हैं और वैध कारण जो न्यायालय को इसका विवेकाधीन क्षेत्राधिकार प्रयोग करने से रोकते हैं सिर्फ इसलिए कि सूट समय के भीतर है न्यायालय द्वारा घोषणा करने का कोई कारण नहीं है। यह कहना पर्याप्त है कि मान लीजिए कि घोषणा के लिए मुकदमा दायर करना वादी के लिए आवश्यक परिस्थितियों में था। यही कारण है कि वादी ने इस उद्देश्य के लिए निर्धारित सीमा अवधि से परे मुकदमा दायर किया ऐसा मुकदमा न तो अनावश्यक था और न ही वादी के कब्जे में बने रहने के अधिकार के लिए निरर्थकता थी, यह इस बात पर निर्भर करता था कि

पट्टा अस्तित्व में था या समाप्त हो गया था। इसलिए, मुकदमे के भीतर लाने के लिए पट्टे पर दिए गए क्षेत्र पर वादी द्वारा दावा किए गए स्वामित्व अधिकारों पर भरोसा करना संभव नहीं है, खासकर जब जमने कब्जे के सवाल से निपटने के दौरान माना था कि प्रश्नगत पट्टे की समाप्ति के आदेश के अनुसरण में लिया गया है।

27. ऊपर हमने जो कहा है, उसके आलोक में हम इस प्रश्न की जांच करना अनावश्यक समझते हैं कि क्या मुकदमा प्रमुख बंदरगाह अधिनियम की धारा 120 द्वारा वर्जित किया गया था। जो छह महीनों की सीमा की बहुत कम अवधि निर्धारित करता है। हम यह जांच करना भी अनावश्यक समझते हैं कि क्या पट्टेदार के मूल वादी-हस्तांतरणकर्ता द्वारा दायर किया गया मुकदमा (2013, 1 एस सी आर। सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के रचनात्क निर्णय के सिद्धांत या आदेश 11 नियम 2 द्वारा वर्णित, इस तथ्य को ध्यान में रखते कि स्थायी निषेधाज्ञा के लिए वर्ष 1980 में पट्टेदार द्वारा दायर पहला मुकदमा उठाया जा सकता था और उठाना भी चाहिए जो कि पट्टे की समाप्ति की वैधता के प्रश्न से संबंधित था, क्योंकि उस समय तक पट्टे की समाप्ति हो चुकी थी तो यह सवाल कि क्या हस्तांतरणकर्ता जिसे पोर्ट ट्रस्ट द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं थी खिलाफ मुकदमा दायर कर सकता है ताकि उसके विक्रेता के पक्ष में पोर्ट ट्रस्ट पट्टे की समाप्ति को चुनौती दी जा सके कि जांच करने की आवश्यकता नहीं है। हमें केवल इतना उल्लेख करने की आवश्यकता है कि पट्टेदार को सह-वादी के रूप में

जोड़ा जाना भी 1999 में देर से आया जब ऐसा प्रतीत होता है कि पट्टे के मूल वादी हस्तांतरणकर्ता को एहसास हो गया है कि पोर्ट ट्रस्ट के खिलाफ अपने अधिकारों का दावा करना मुश्किल है वो भी आधार जो इसके बिना किया गया था पोर्ट ट्रस्ट के विरूद्ध एक हस्तांतरण के आधार पर जो पट्टादाता पोर्ट ट्रस्ट के अनुमति के बिना किया था।

28. परिणामस्वरूप, हम इस अपील की अनुमति देते हैं, निचली अदालतों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री को रद्द करते है और उत्तरदाताओं द्वारा दायर मुकदमे को खारिज करते हैं, लेकिन इन परिस्थितियों में लागत का आदेश दिए बिना।

अपील की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अरुण कुमार दुबे (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।